२. सत्प्ररुपणा विभाग

षट्खंडागमकी पूर्व प्रकाशित प्रथम पुस्तक तथा अब प्रकाशित होनेवाली व्दितीय पुस्तकको हमने ‘सत्प्ररुपणा’ के नामसे प्रकट किया है। प्रथम जिल्दके प्रकाशित होनेपर शंका उठाई गई है कि उस ग्रन्थको सत्प्ररुपणा न कहकर ‘जीवस्थान-प्रथम अंश’ ऐसा लिखना चाहिए था। इसके उन्होंने दो कारण बतलाये हैं। एक तो यह कि इस विभागके भीतर जो मंगलाचरण है वह केवल सत्प्ररुपणाका नहीं है बल्कि समस्त जीवस्थान खंडका है और दूसरे यह कि इसके आदिमें जो विषय-विवरण पाया जाता है वह सत्प्ररुपणाके बाहरका है, सत्प्ररुपणाका अंग नही२ (अनेकान्त,वर्ष २, किरण ३, पृ . २०१)। इन दोनों आपत्तियोंपर विचार करके भी हम इसी निष्कर्षपर पहुंचे है कि हमने जो इस विभागको ‘जीवस्थानका प्रथम अंश’ न कहकर ‘सत्प्ररुपणा’ कहा है वही ठीक है। इसके कारण निम्न प्रकार है---

१. यह बात ठीक है कि आदिका मंगलाचरण केवल सत्प्ररुपणा ही नहीं, किन्तु समस्त जीवस्थानका है। पर, अवान्तर विभागोंकी दृष्टिसे सत्प्ररुपणाके भीतर उसे लेनेसे भी वह समस्त जीवस्थानका बना रहता है। सब ग्रन्थोंमें मंगलाचरणकी यही व्यवस्था पायी जाती है कि वह ग्रन्थके आदिमें किया जाता है और जो भी खंड, स्कंध, सर्ग, अध्याय और विषयविभाग आदिमें हो उसीके अन्तर्गत किये जानेपर भी वह समस्त ग्रन्थका समझा जाता है। समस्त ग्रन्थपर उसका अधिकार प्रकट करनेके लिए उसका एक स्वतंत्र विभाग नहीं बनाया जाता। अतएव जीवस्थान ही क्यों, जहांतक ग्रन्थमें सूत्रकारकृत दूसरा मंगलाचरण न पाया जावे वहांतक उसी मंगलाचरणका अधिकार समझना चाहिए, चाहे विषय दृष्टिसे ग्रन्थमें कितने ही विभाग क्यों न पड गये हों। स्वयं धवलाकरने आगे वेदनाखण्ड और कृति अनुयो

गव्दारके आदिमें आये हुए मंगलाचरणको शेष दोनों खंडो और तेवीस अधिकारोंका भी मंगलाचरण कहा है। यथा-

उवरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु कस्सेदं मंगलं? तिण्णं खंडाणं। X X X कध वेयणाए आदीय उत्तं मंगलं सेस-दो खंडाणं होदि? ण, कदीए आदिम्हि उत्तस्स एदस्स मंगलस्स सेस-तेवीस-अणि योगद्दारेसु पउत्ति-दंसणादो।

ऐसी अवस्थामें णमोकार मंत्ररुप मंगलाचरणके सत्प्ररुपणाके आदिमें होते हुए भी उसके समस्त जीवस्थानके मंगलाचरण समझे जानेमें कोई आपत्ति तो नहीं होना चाहिए।

२. यथार्थत: तो वह मंगलाचरण सत्प्ररुपणाका ही है। आचार्य पुष्पदन्तने उस मंगलाचरणको आदि लेकर सत्प्ररुणा मात्रके ही सूत्रोंकी तो रचना की है। यदि हम इसे भूतबलि आचार्यकी आगेकी रचना के पृथक् कर ले तो पुष्पदन्तकी रचना उस मंगलसूत्र सहित सत्प्ररुपणा ही तो कहलायगी। जीवस्थानका प्रथम अंश यही सत्प्ररुपणा ही तो है।

३. यदि इस अंशको सत्प्ररुपणा न कह कर जीवस्थानका प्रथम अंश कहते तो पाठक उससे क्या समझते? इस नामसे उसके विषयपर क्या प्रकाश पडता? वह एक अज्ञात कुलशील और निरुपयोगी शीर्षक सिध्द होता।

४. हमने जो ग्रंथका विषय-विभाग किया है वह मूलग्रन्थ पुष्पदन्त और भूतबलिकृत षट्खंडागमकी अपेक्षासे है और उसमें सत्प्ररुपणासे पूर्व किसी और विषयविभागके लिए स्थान नही है। मंगलाचरणके पश्यात् छह-सात सूत्रोंमें सत्प्ररुपणाका यथोचित स्थान और कार्य बतलानेके लिए चौदह जीवसमासो और आठ अनुयोगव्दारोंका उल्लेख मात्र करके सत्प्ररुपणाका विवेचन प्रारम्भ कर दिया गया है। धवलाटीकाके कर्ताने उन सूत्रोंकी व्याख्याके प्रसंगसे जीवस्थानकी उत्थानिकाका कुछ विस्तारसे वर्णन कर डाला तो इससे क्या उस विभागको सत्प्ररुपणासे अलग निर्दिष्ट करनेके लिए एक नये शीर्षककी आवश्यकता उत्पन्न हो गई? ऐसा हमें जान नहीं पडता। षट्खण्डागमके भीतर जो सूत्रकार व्दारा निर्दिष्ट विषय विभाग है उन्हींके अनुसार विभाग रखना हमने उचित समझाहै। धवलाकारने भी आदिसे लगाकर १७७ सूत्रोकी क्रमसंख्या लगातार रखी है और उनकी एक ही सिलसिलेसे टीका की है जिसे उन्होंने 'संतसुत्तविवरण' कहा है जैसा कि प्रस्तुत भागके प्रारंभिक वाक्यसे स्पष्ट है। यथा ---

‘संपहि संत-सुत्त-विवरण-समत्ताणंतरं तेसिं परुवणं भणिस्सामो’।